प्रकाशन तिथि : 26 अक्टूबर 2017, मूल्य 2 रुपये, वर्ष 36, अंक 4, कुल पृष्ठ 28

वीतराग-विज्ञान

(पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट का मुखपत्र)

ISSN 2454 - 5163

सम्पादक :
डॉ. हुकमचंद भारिल्ल

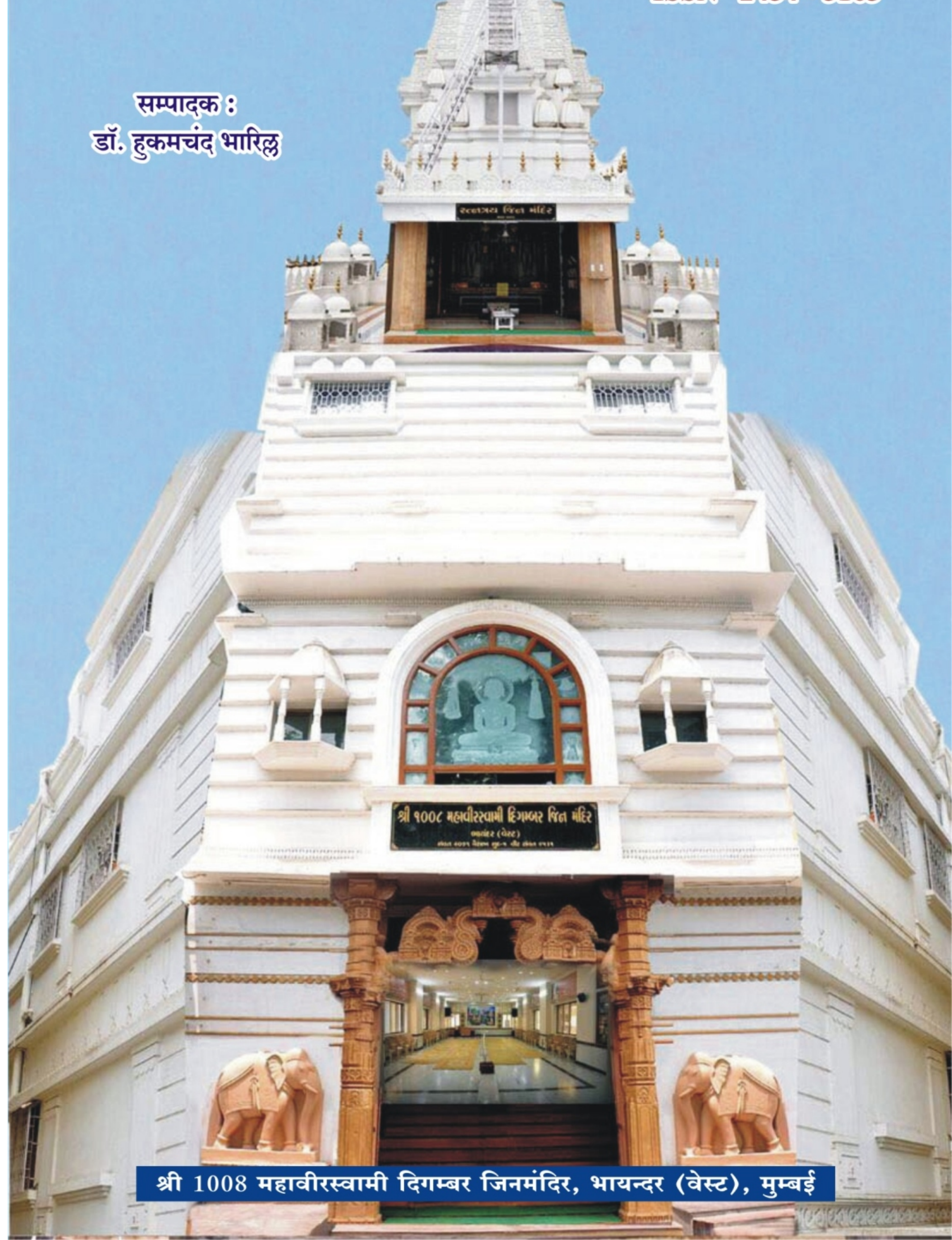

श्री 1008 महावीरस्वामी दिगम्बर जिनमंदिर, भायन्दर (वेस्ट), मुम्बई

वीतराग-विज्ञान (411)

हिन्दी, मराठी व कन्नड़ भाषा में प्रकाशित

जैनसमाज का सर्वाधिक बिक्रीवाला आध्यात्मिक मासिक

सम्पादक :
डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

सह-सम्पादक :
डॉ. संजीवकुमार गोधा

प्रकाशक एवं मुद्रक :
ब्र. यशपाल जैन द्वारा पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के लिये जयपुर प्रिण्टर्स प्रा. लि., जयपुर से मुद्रित एवं प्रकाशित।

सम्पर्क-सूत्र :
पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट
ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015
फोन :(0141)2705581, 2707458
E-mail : ptstjaipur@yahoo.com

ISSN 2454 - 5163

शुल्क :

आजीवन	:	251 रुपये
वार्षिक	:	25 रुपये
एक प्रति	:	2 रुपये

मुद्रण संख्या :

हिन्दी	:	7200
मराठी	:	2000
कन्नड़	:	1000
कुल	:	10200

कर्तृत्व शक्ति

आत्मा की ऐसी कर्तृत्व शक्ति है कि अपने ज्ञानादि कार्य का कर्त्ता स्वयं ही होता है। क्या भगवान की दिव्यध्वनि इस आत्मा के ज्ञान की कर्त्ता है ? – नहीं; केवली-श्रुतकेवली के निकट ही क्षायिक सम्यक्त्व हो ऐसा नियम है, तो क्या केवली-श्रुतकेवली इस आत्मा के क्षायिक सम्यक्त्व के कर्त्ता हैं? नहीं; उस रूप होकर उसके कर्त्ता होनेरूप कर्तृत्वशक्ति आत्मा की ही हैं, उसे किसी अन्य की अपेक्षा नहीं है; क्योंकि वस्तु की शक्तियाँ दूसरे की अपेक्षा नहीं रखती।

शरीरादि जड़ में ऐसी शक्ति नहीं है कि वे आत्मा के कार्य के कर्त्ता हों। राग में भी ऐसी शक्ति नहीं है कि वह आत्मा के सम्यग्दर्शनादि कार्यों का कर्ता हो। आत्मा के स्वभाव में ही ऐसी शक्ति है कि वह अपने सम्यग्दर्शनादि कार्य का कर्त्ता होता है। ऐसी शक्तिवाले आत्मा को जो भजे उसे सम्यग्दर्शनादि कार्य हुए बिना नहीं रहता।

– आत्मप्रसिद्धि, पृष्ठ 510

वीतराग-विज्ञान

वीतराग-विज्ञान ही, तीन लोक में सार।
वीतराग-विज्ञान का , घर-घर होय प्रसार॥

वर्ष : 36 (वीर नि. संवत् - 2543) 411 अंक : 4

विकलपता मिट जाय है..

मोहि कब ऐसा दिन आये है ॥ टेक ॥
सकल विभाव अभाव होहिंगे,
विकलपता मिट जाय है॥ मोहि.॥
यह परमातम यह मम आतम,
भेदबुद्धि न रहाय है।
औरनि की का बात चलावै,
भेद-विज्ञान पलाय है॥ मोहि.॥
जानैं आप आप मैं आपो,
सो व्यवहार विलाय है।
नय परमान निखेपन माहीं,
एक न औसर पाय है॥ मोहि.॥
दरसन ज्ञान चरन के विकलप,
कहो कहाँ ठहराय है।
'द्यानत' चेतन चेतन ह्वै है,
पुद्गल, पुद्गल धाय है॥ मोहि.॥

– कविवर पण्डित द्यानतरायजी

सम्पादकीय

कुन्दकुन्द शतक अनुशीलन

(नम्बर 28-29)

(गतांक से आगे ...)

भूतार्थनय से जाने गये तत्त्वार्थ

भूदत्थेणाभिगदा जीवाजीवा य पुण्णपावं च।
आसवसंवरणिज्जरबंधो मोक्खो य सम्मत्तं।।

(हरिगीत)

चिदचिदास्रव पाप-पुण्य शिव बंध संवर निर्जरा।
तत्त्वार्थ ये भूतार्थ से जाने हुए सम्यक्त्व हैं।।

भूतार्थ (निश्चय) नय से जाने हुए जीव, अजीव, पुण्य, पाप, आस्रव, संवर, निर्जरा, बंध और मोक्ष - ये नव तत्त्व ही सम्यग्दर्शन हैं। तात्पर्य यह है कि **मात्र व्यवहार से तत्त्वों का स्वरूप जान लेना पर्याप्त नहीं है, नव तत्त्वों का वास्तविक स्वरूप निश्चयनय से जानना चाहिए।**

यह गाथा समयसार परमागम की १३वीं गाथा है। इसमें एक बार फिर से भूतार्थनय से सम्यग्दर्शन को परिभाषित किया गया है।

इस गाथा में सम्यग्दर्शन का स्वरूप तो बताया ही गया है, प्रकारान्तर से समयसार में आगे आनेवाली विषयवस्तु का संकेत भी कर दिया है, आगे के अधिकारों के नामोल्लेख भी कर दिये हैं।

कर्ता-कर्म अधिकार एवं सर्वविशुद्धज्ञान अधिकार को छोड़कर अन्य सभी अधिकारों के नाम भी आ ही गये हैं, अधिकारों का क्रम भी आ गया है। **इस गाथा में तत्त्वों के नाम जिस क्रम से आये हैं, वही क्रम अधिकारों का है। इससे स्पष्ट है कि इस गाथा में तत्त्वों के नामों का जो क्रम है, वह छन्दानुरोध से नहीं, अपितु बुद्धिपूर्वक रखा गया है।**

यह क्रम तत्त्वार्थसूत्र के क्रम से कुछ हटकर है। तत्त्वार्थसूत्र के सूत्र में भी जो क्रम है, वही क्रम उसके प्रतिपादन में भी है, अधिकारों में भी है। अत: वहाँ भी यह क्रम बुद्धिपूर्वक ही रखा गया है। उसके औचित्य पर भी उसके टीकाकारों ने प्रकाश डाला है। तत्त्वार्थसूत्र गद्य में होने से छन्दानुरोधवाला तर्क भी नहीं दिया जा सकता।

आचार्य अमृतचन्द्र आत्मख्याति टीका को नाटक के रूप में प्रस्तुत करते हैं। नाटक में रंगमंच पर पात्र जोड़े से आते हैं; इसलिए उसमें भी विषयवस्तु को जोड़ों के माध्यम से आगे बढ़ाया गया है। इसलिए, **जीव-अजीव, आस्रव-संवर, बंध-मोक्ष - ऐसे जोड़े बनाये गये हैं। इस बात को इसी गाथा के अनुशीलन में विस्तार से समझाया है।**

तत्त्वार्थसूत्र का कथन **सैद्धान्तिक कथन** है और समयसार का कथन **आध्यात्मिक कथन** है। तत्त्वार्थसूत्रकर्ता को सप्त तत्त्वार्थों का प्रमाण और नयों से गुण-पर्याय सहित, सर्वांग विवेचन अभीष्ट था, जैसा कि उन्होंने आगे किया भी है। जीवों के संसारी-सिद्ध सभी भेद बताये, उनके रहने के स्थानों की चर्चा की। अजीवादि तत्त्वों का भी इसीप्रकार विस्तृत विवेचन किया। आस्रव में सत्तावन प्रकार के आस्रव बताये, उनके शुभाशुभभेद करके व्रतों का वर्णन भी किया। बंधतत्त्व में कर्मों की प्रकृतियाँ गिनाई, निर्जरा में भी उसके उपायों की विस्तृत समीक्षा की; पर समयसार में यह सब नहीं है।

समयसार की प्रतिपादनशैली ही अलग है। समयसार में तो सभी तत्त्वों में प्रकाशमान आत्मज्योति को ही खोजा गया है।

सर्वत्र आत्मज्योति को खोजना **भूतार्थनय का ही कार्य है।** भूतार्थनय ही यह महान कार्य कर सकता है। अत: समयसार के आरंभ में ही, इस तेरहवीं गाथा में ही यह घोषित कर दिया कि भूतार्थनय से जाने हुए जीवादि नवतत्त्व ही सम्यग्दर्शन है और आगे सभी तत्त्वों की मीमांसा भी

इसी नय से प्रस्तुत की है, सर्वत्र आत्मज्योति को ही खोजा गया है।

रही बात तत्त्वों की संख्या में सात और नौ के अन्तर की, सो यह कोई खास बात नहीं है, क्योंकि तत्त्वार्थसूत्र में पुण्य और पाप को आस्रव-बंध में शामिल कर लिया गया है और समयसार में उन्हें अलग कर दिया गया है। बस इतनी ही बात है।

भूतार्थ और अभूतार्थ

ववहारो भूदत्थो भूदत्थो देसिदो दु सुद्धणओ।
भूदत्थमस्सिदो खलु सम्मादिट्ठी हवदि जीवो ॥

(हरिगीत)

शुद्धनय भूतार्थ है अभूतार्थ है व्यवहारनय।
भूतार्थ की ही शरण गह यह आतमा सम्यक् लहे॥

व्यवहारनय अभूतार्थ (असत्यार्थ) है और शुद्धनय (निश्चयनय) भूतार्थ (सत्यार्थ) है। जो जीव भूतार्थ अर्थात् शुद्ध निश्चयनय के विषयभूत निज भगवान आत्मा का आश्रय लेता है, वह जीव नियम से सम्यग्दृष्टि होता है।

यह गाथा समयसार परमागम की ११वीं गाथा है।

एक तो इसमें व्यवहारनय को **अभूतार्थ-असत्यार्थ** कहा गया है और दूसरे शुद्धनय को **भूतार्थ अर्थात् सत्यार्थ** कहा गया है तथा उसी भूतार्थ शुद्धनय के माध्यम से सम्यग्दर्शन की प्राप्ति की बात कही गई है।

उक्त गाथा का भाव स्पष्ट करते हुए आचार्य अमृतचन्द्र आत्मख्याति में लिखते हैं –

''सब ही व्यवहारनय अभूतार्थ होने से अभूत (अविद्यमान-असत्य) अर्थ को प्रगट करते हैं। **एक शुद्धनय ही भूतार्थ होने से भूत (विद्यमान-सत्य) अर्थ को प्रगट करता है।**

अब इसी बात को उदाहरण द्वारा स्पष्ट करते हैं। यद्यपि प्रबल कीचड़

के मिलने से आच्छादित है निर्मलस्वभाव जिसका, ऐसे समल जल का अनुभव करनेवाले एवं जल और कीचड़ के विवेक से रहित अधिकांश लोग तो उस जल को मलिन ही अनुभव करते हैं।

वे यह नहीं समझ पाते कि स्वभाव से तो जल निर्मल ही है, मलिनता तो मात्र संयोग में है। इसकारण वे जल को ही मलिन मान लेते हैं; **तथापि कुछ लोग अपने हाथ से डाले हुए कतकफल के पड़ने मात्र से उत्पन्न जल-कीचड़ के विवेक से, अपने पुरुषार्थ से प्रगट किये हुए निर्मलस्वभाव से उस जल को निर्मल ही अनुभव करते हैं।**

तात्पर्य यह है कि अधिकांश लोग तो पंकमिश्रित जल को स्वभाव से मैला मानकर वैसा ही पी लेते हैं और अनेक रोगों से आक्रान्त हो दुःखी होते हैं; किन्तु कुछ समझदार लोग अपने विवेक से इस बात को समझ लेते हैं कि जल मैला नहीं है, इस मैले जल में जल जुदा है और मैल जुदा है तथा कतकफल के जरिये जल और मैल को जुदा-जुदा किया जा सकता है।

अत: वे स्वयं के हाथ से कतकफल डालकर मैले जल को इतना निर्मल बना लेते हैं कि उसमें अपना पुरुषाकार भी स्पष्ट दिखाई देने लगता है और उस जल को पीकर नीरोग रहते हैं, आरोग्यता का आनन्द लेते हैं।

इसीप्रकार प्रबल कर्मोदय के संयोग से सहज एक ज्ञायकभाव तिरोभूत (आच्छादित) हो गया है जिसका, ऐसे आत्मा का अनुभव करनेवाले एवं आत्मा और कर्म के विवेक से रहित, व्यवहारविमोहित चित्तवाले अधिकांश लोग तो आत्मा को अनेकभावरूप अशुद्ध ही अनुभव करते हैं; तथापि **भूतार्थदर्शी लोग अपनी बुद्धि से प्रयुक्त शुद्धनय के प्रयोग से उत्पन्न आत्मा और कर्म के विवेक से अपने पुरुषार्थ द्वारा प्रगट किये गये सहज एक ज्ञायकभाव को शुद्ध ही अनुभव करते हैं, एक ज्ञायकभावरूप ही अनुभव करते हैं; अनेकभावरूप अनुभव नहीं करते।**

यहाँ शुद्धनय कतकफल के स्थान पर है; इसलिए जो शुद्धनय का

आश्रय लेते हैं, वे ही सम्यक् अवलोकन करते हुए सम्यग्दृष्टि होते हैं; अन्य नहीं। इसलिए कर्मों से भिन्न आत्मा को देखनेवालों को व्यवहारनय अनुसरण करने योग्य नहीं है।''

यह गाथा अत्यन्त गंभीर है, इसमें जिनागम का सार तो भरा ही है, जिनागम को समझने की विधि भी बता दी गई है। इस गाथा के मर्म को समझने के लिए अत्यधिक सावधानी अपेक्षित है; क्योंकि **जरा सी चूक हो जाने पर बहुत बड़ी हानि हो सकती है।**

यह गाथा और इसकी टीका के पढ़ने से एक बात एकदम स्पष्ट होती है कि सभी प्रकार के व्यवहारनय अभूतार्थ हैं, असत्यार्थ हैं और **एकमात्र शुद्धनय ही भूतार्थ है, सत्यार्थ है।**

अध्यात्मनय दो प्रकार के होते हैं – १. व्यवहारनय और २. निश्चयनय।

व्यवहारनय भी दो प्रकार का होता है – १. असद्भूतव्यवहारनय और २. सद्भूतव्यवहारनय।

ये असद्भूत और सद्भूत व्यवहारनय भी उपचरित और अनुपचरित के भेद से दो-दो प्रकार के होते हैं। इसप्रकार कुल मिलाकर **व्यवहारनय चार प्रकार का हो गया –**

१. उपचरित-असद्भूतव्यवहारनय

२. अनुपचरित-असद्भूतव्यवहारनय

३. उपचरित-सद्भूतव्यवहारनय

४. अनुपचरित-सद्भूतव्यवहारनय

निश्चयनय भी दो प्रकार का होता है –

१. अशुद्धनिश्चयनय और

२. शुद्धनिश्चयनय।

शुद्धनिश्चय तीनप्रकार का होता है –

१. एकदेशशुद्धनिश्चयनय

२. शुद्धनिश्चयनय या साक्षात्शुद्धनिश्चयनय और

३. परमशुद्धनिश्चयनय।

इसप्रकार कुल मिलाकर निश्चयनय भी चार प्रकार का हो गया।

ये चार प्रकार के व्यवहार और चार प्रकार के निश्चय – कुल मिलाकर **आठ नय** अध्यात्मनय कहे जाते हैं।

जो नय संयोग का ज्ञान कराये, उसे असद्भूतव्यवहारनय कहते हैं। शरीर, स्त्री-पुत्रादि, मकानादि को अपना कहना, आत्मा को उनका कर्ता-भोक्ता-ज्ञाता कहना इसी नय का काम है।

स्त्री-पुत्रादि, मकानादि तथा ग्राम-नगरादि दूरस्थ परपदार्थों को अपना कहना, आत्मा को उनका कर्ता-भोक्ता-ज्ञाता कहना **उपचरित असद्भूतव्यवहारनय है** और आत्मा के साथ एकक्षेत्रावगाहरूप से रहनेवाले शरीर को अथवा आत्मा और शरीर से मिले हुए रूप को आत्मा कहना, आत्मा का कहना, आत्मा को उसका कर्ता-भोक्ता-ज्ञाता कहना **अनुपचरित-असद्भूतव्यवहारनय** है।

अभेद-अखण्ड आत्मा को गुणों और पर्यायों के भेद करके समझना, समझाना, कहना, सद्भूतव्यवहारनय का कार्य है।

अल्पविकसित एवं विकारी पर्यायों को आत्मा का कहना, उनका कर्ता-भोक्ता-ज्ञाता आत्मा को कहना **उपचरित-सद्भूतव्यवहारनय** का कथन है और अभेद आत्मा में ज्ञान-दर्शन-चारित्र के भेद करना तथा पूर्ण विकसित निर्मल पर्यायों को आत्मा का कहना, उनका कर्ता-भोक्ता-ज्ञाता आत्मा को कहना **अनुपचरित-सद्भूतव्यवहारनय** का कार्य है।

रागादि विकारी भावों से आत्मा को अभेद बताना **अशुद्धनिश्चयनय** है। आत्मा को मिथ्यादृष्टि कहना इसी नय का काम है।

एकदेशशुद्धपर्याय से आत्मा को अभेद बताना **एकदेशशुद्धनिश्चय नय** है। आत्मा को सम्यग्दृष्टि, देशसंयमी कहना इसी नय का कथन है।

पूर्णशुद्धपर्याय से आत्मा को अभेद बताना **शुद्धनिश्चयनय** या साक्षात् शुद्धनिश्चयनय है। आत्मा को केवलज्ञानी कहना, सिद्ध कहना इसी नय का कथन है।

आत्मा को सम्पूर्ण शुद्धाशुद्धपर्यायों से रहित, गुणभेद से भिन्न, अभेद-अखण्ड-नित्य जानना-कहना **परमशुद्धनिश्चयनय** है।

त्रिकाली ध्रुव ज्ञायकभाव इसी परमशुद्धनिश्चयनय का विषय है।

परमशुद्धनिश्चयनय का विषयभूत यह ज्ञायकभाव ही दृष्टि का विषय है और इसके आश्रय से ही सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र की प्राप्ति होती है।

इस गाथा में जो शुद्धनय शब्द का प्रयोग है, वह परमशुद्धनिश्चयनय के अर्थ में ही है। यहाँ एकमात्र उसे ही भूतार्थ कहा गया है, शेष निश्चयनय भी परमशुद्धनिश्चयनय की अपेक्षा व्यवहार ही हो जाते हैं; अत: किसी अपेक्षा वे भी अभूतार्थ हो जाते हैं; परन्तु **परमशुद्धनिश्चयनय सदा ही भूतार्थ रहता है।**

गाथा में स्पष्टरूप से कहा गया है कि जो जीव भूतार्थ का आश्रय करता है, वह जीव सम्यग्दृष्टि होता है। अत: यह सुनिश्चित ही है कि **जिस नय की विषयभूत वस्तु में अपनापन स्थापित करने से सम्यग्दर्शन होता है, वही नय भूतार्थ है, सत्यार्थ है।**

उक्त आठ नयों में एक परमशुद्धनिश्चयनय ही ऐसा है, जिसके विषयभूत आत्मद्रव्य में अपनापन स्थापित होने से सम्यग्दर्शन होता है।

अत: वह ही वास्तविक शुद्धनय है और वही भूतार्थ है; शेष सभी नय अभूतार्थ हैं। (क्रमश:)

पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के समस्त ऑडियो - वीडियो प्रवचन साहित्य एवं अन्य अनेक जानकारियों के लिये अवश्य देखें -
वेबसाईट - www.vitragvani.com
संपर्क सूत्र-श्री कुन्दकुन्द कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई
Ph.: 022-26130820, 26104912, E-Mail- info@vitragvani.com

छहढाला प्रवचन

सम्यग्ज्ञानपूर्वक चारित्र का उपदेश

सम्यग्ज्ञानी होय बहुरि, दृढ चारित्र लीजै।
एकदेश अरु सकलदेश, तसु भेद कहीजै।।
त्रस हिंसा को त्याग, वृथा थावर न संहारै।
परवधकार कठोर निंद्य, नहिं वचन उचारै।।१०।।

(सुप्रसिद्ध आध्यात्मिक विद्वान पण्डित दौलतरामजीकृत छहढाला की चौथी ढाल पर गुरुदेवश्री के प्रवचन पाठकों के लाभार्थ यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं।)

(गतांक से आगे....)

जीव का जीवन या मरण उसकी आयु के अनुसार होता है, परन्तु जिस जीव को अकषायरूप वीतराग भाव है, वह अहिंसक है और जिस जीव को सकषायरूप रागादि भाव है, वह हिंसक है। यह भगवान वीरनाथ द्वारा कथित अहिंसा-हिंसा का महान सिद्धान्त है। रागादिरूप हिंसा अधर्म है और वीतराग भाव रूप अहिंसा परम धर्म है। अहिंसा धर्म का ऐसा उपदेश सर्वजीवों के लिए हितकारी होने से यही 'इष्ट उपदेश' है, यही भगवान महावीर का उपदेश है।

वीतरागभावरूप अहिंसा इष्टफलवाली है और मोक्ष इष्ट है। रागादि भावरूप हिंसा अनिष्ट फलवाली है और संसार अनिष्ट है।

ऐसी अहिंसा तथा हिंसा का स्वरूप अधिक स्पष्ट रीति से समझने के लिए यहाँ एक उदाहरण दिया जा रहा है -

एक जंगलमें चालीस लुटेरे रहते थे। वे क्रूर परिणामी और मांसाहारी थे। वे जंगल में शिकार की तलाश में घूमते रहते थे। इतने में ही एक धर्मात्मा मुनि उस जंगल में आए। उन आत्मज्ञानी और वीतरागभाव में

मस्त सन्त को उन दुष्टों ने देख लिया। वे लुटेरे उस सन्त को मारकर उसका मांस खाने के भाव से उनके पीछे पड़ गए। वे धर्मात्मा सन्त तो उपसर्ग समझकर शान्ति से ध्यान में विराज गए। लुटेरे उनको पकड़कर मारने की तैयारी में ही थे; किन्तु इतने में एक राजा उधर से निकला। राजा सज्जन और वीर था। मुनि और लुटेरों को देखकर वह सारी परिस्थिति समझ गया। दुष्ट लुटेरों के पंजे से मुनि की रक्षा करने के लिए उसने लुटेरों को बहुत समझाया कि इन निर्दोष धर्मात्मा को हैरान मत करो; परन्तु वे मांस लोभी दुष्ट लुटेरे किसी भी प्रकार नहीं माने और मुनि को मारने लगे। तब राजा से नहीं रहा गया और उसने मुनि रक्षा के लिए लुटेरों का सामना किया। वे चालीस लुटेरे भी एक साथ राजा पर टूट पड़े, परन्तु बहादुर राजा ने अपने अतुल पराक्रम से सभी लुटेरों को मारकर मुनि की रक्षा की। लुटेरे न तो मुनि को ही मार सके और न उस राजा को ही मार सके।

अब हमें यहाँ दो बातों पर विचार करना है -

१. राजा द्वारा तो चालीस लुटेरों की हत्या की गई।

२. लुटेरों के द्वारा एक भी मनुष्य की हिंसा नहीं हुई।

तो अब उन दो में से अधिक हिंसक किसे माना जाए ? राजा को या लुटेरों को ? तथा मुनिराज को हिंसा हुई या अहिंसा ?

निश्चित ही आप लुटेरों को ही हिंसक कहेंगे और राजा को हिंसक न कहकर उसकी प्रशंसा ही करेंगे तथा मुनिराज के लिए तो यही कहेंगे कि वे न हिंसक थे न अहिंसक।

चालीस मनुष्य मारे गये तथापि उस राजा को अल्प हिंसक भी नहीं माना जाता और कोई मनुष्य न मरने पर भी उन लुटेरों को हिंसक माना गया, क्या यह ठीक है ? गहराई से विचार करने पर इन प्रश्नों का सही उत्तर इसप्रकार होगा।

लुटेरे तीव्र हिंसक थे, राजा अल्प हिंसक था और मुनिराज अहिंसक थे; क्योंकि बहुत जीव मरे इसलिए बहुत हिंसा और अल्प जीव मरे इसलिए अल्प हिंसा - ऐसा नियम नहीं है, यदि ऐसा होता तो राजा ही बड़ा हिंसक ठहरता, किन्तु ऐसा नहीं है। तब फिर कैसा है ? जहाँ बहुत कषाय वहाँ बहुत हिंसा जहाँ अल्पकषाय वहाँ अल्प हिंसा और जहाँ अकषायरूप वीतरागभाव वहाँ अहिंसा - ऐसा सिद्धान्त है।

लुटेरों ने मुनि को मारने के भावरूप तीव्र कषाय भाव किया, इसलिए उन्हें बहुत हिंसा हुई। राजा ने अल्प कषाय की इसीलिए उसे अल्प हिंसा हुई। यद्यपि उसको मुनि को बचाने का शुभभाव था; परन्तु उसने जितनी कषाय की उतनी तो हिंसा ही हुई, क्योंकि कषाय स्वयं हिंसा है।

जिसने राग-द्वेष नहीं किया ऐसे मुनिराज परम अहिंसक थे; क्योंकि वीतरागभाव ही अहिंसा है और रागादिभाव ही हिंसा है।

हिंसा-अहिंसा के संबंध में अबाधित नियम पहले ही पुरुषार्थसिद्ध्युपाय के श्लोक ४४ द्वारा प्रतिपादित किया जा चुका है। उसका विशेष स्पष्टीकरण इसप्रकार है -

जहाँ कषाय सहित योग से द्रव्य-भावरूप प्राणों का घात है, वहाँ निश्चित हिंसा है।

जिस सत्यपुरुष को योग्य आचरण है और रागादि कषाय का अभाव है, उसको मात्र प्राणघात से कभी हिंसा नहीं होती।

जहाँ रागादि कषायवश प्रमादवृत्ति है, वहाँ जीव मरें या न मरें तथापि हिंसा निश्चित है; क्योंकि सकषाय जीव कषाय से प्रथम स्वयं अपने आत्मा के चैतन्य प्राण का हनन तो करता ही है, चाहे अन्य जीव की हिंसा हो या न हो।

पर-वस्तु के कारण जीव को सूक्ष्म भी हिंसा नहीं होती, अपने कषायभाव से ही हिंसा होती है। **(क्रमशः)**

नियमसार प्रवचन –

शुद्ध आत्मा को कर्तृत्व का अभाव

परमपूज्य सर्वश्रेष्ठ दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्द के प्रसिद्ध परमागम नियमसार के परमार्थप्रतिक्रमणाधिकार की गाथा ८२ पर हुये आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी के अध्यात्मरस गर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है। गाथाएं मूलत: इसप्रकार हैं –

एरिसभेदब्भासे मज्झत्थो होदि तेण चारित्तं।
तं दिढकरणणिमित्तं पडिक्कमणादी पवक्खामि ।।८२ ।।

(हरिगीत)

इस भेद के अभ्यास से मध्यस्थ हो चारित्र हो।
चारित्र दृढता के लिए प्रतिक्रमण की चर्चा करूँ ।।८२।।

ऐसा भेद-अभ्यास होने पर जीव मध्यस्थ होता है, इसलिये चारित्र होता है। उसे (चारित्र को) दृढ़ करने के निमित्त से मैं प्रतिक्रमणादि कहूँगा।

(गतांक से आगे....)

परद्रव्य शरणभूत नहीं है, शुद्धचैतन्यस्वभाव की भावना ही शरणभूत है।

यह शुद्धचैतन्यस्वभाव ही मैं हूँ – मैं ज्ञायक हूँ – यह एक ही रटन करने जैसी है और उसकी श्रद्धा मरण-समय काम आती है। शरीर तो आकाश के एक क्षेत्र में है, मैं तो चैतन्यस्वभावी हूँ, मेरे में पराधीनता है ही नहीं। अस्वस्थता, वृद्धावस्था मरण-समय में क्या करेगी? रोग के समय सेवा-संभाल करनेवाला हो तो भी क्या काम आवेगा? मैं अखण्ड परमात्मा परिपूर्ण हूँ, वर्तमान पर्याय में हीनता है उसको टालकर पूर्ण होऊँगा – ऐसा भेद भी मेरे में नहीं है। मैं तो चैतन्य से पूर्ण हूँ – ऐसी भावना मृत्यु-समय काम आती है। ऐसी निज-पूँजी का ज्ञान नहीं और परद्रव्य, शरीर, सगे-साथी आदि की जो चिन्ता करता है, वह घर की पूँजी खो बैठता है और अशान्ति का भोग करता है। मैं तो चैतन्य-

विलासस्वरूप ही हूँ – ऐसा अन्दर से जिसे उल्लास आता है उसकी परपदार्थों के संयोग या वियोग पर दृष्टि नहीं रहती, अपितु शुद्ध चैतन्यस्वभाव के ऊपर दृष्टि जम जाती है और वह जीव अल्पकाल में मुक्ति को प्राप्त हो जाता है।

अब यहाँ नवीन गाथा प्रारम्भ करते हैं –

एरिसभेदब्भासे मज्झत्थो होदि तेण चारित्तं।
तं दिढकरणणिमित्तं पडिक्कमणादी पवक्खामि ।।८२ ।।

(हरिगीत)

इस भेद के अभ्यास से मध्यस्थ हो चारित्र हो।
चारित्र दृढता के लिए प्रतिक्रमण की चर्चा करूँ ।।८२।।

ऐसा भेद-अभ्यास होने पर जीव मध्यस्थ होता है, इसलिये चारित्र होता है। उसे (चारित्र को) दृढ़ करने के निमित्त से मैं प्रतिक्रमणादि कहूँगा।

चौदह गुणस्थानों के भेदरूप मैं नहीं हूँ, इसप्रकार भेदज्ञान करने पर जीव मध्यस्थ होता है। भेद और पर्याय का लक्ष्य छोड़कर ही चारित्र होता है, महाव्रतादि के विकल्प से चारित्र नहीं होता।

मुमुक्षु जीव शुद्ध-आत्मा, राग, निमित्तादि सब पदार्थों का यथार्थ ज्ञान करता है।

भेदविज्ञान द्वारा स्वभाव का अवलम्बन लेने पर जितनी स्थिरता हुई है, वह चारित्र है। पूर्व की पाँच गाथाओं द्वारा पदार्थों का ज्ञान कराया है। गति आदि मार्गणास्थान, गुणस्थान आदि सब एकसमय की पर्याय में हैं, शुद्धजीव में नहीं हैं।

(१) कोई 'ब्रह्म सत्य और जगत मिथ्या' – ऐसा कहकर अन्य वस्तुओं का, राग का, निमित्त का निषेध करे तो वह वस्तुस्वरूप से अनभिज्ञ है। भेदज्ञान अकेले एकवस्तु में नहीं हो सकता। एक से अधिक वस्तुयें हों अर्थात् दो के बीच भेदज्ञान संभवित है, इसलिए भेद-अपेक्षा

से भेद है।

(२) कोई जीव एकान्त भेद को ही माने, किन्तु अभेदस्वभाव को न मानें तो वह भी खोटा है। अभेदस्वभाव की श्रद्धा होने पर भी पर्याय में राग और भेद न हो तो तुरन्त ही केवली हो जाना चाहिए, किन्तु ऐसा नहीं होता। स्वभाव की श्रद्धा होने पर भी साधक को रागादि का भेद पड़ता है।

(३) साधकजीव को अभेदस्वभाव का ज्ञान है और रागादि भेदों का भी ज्ञान है; परन्तु वह राग आश्रय करने योग्य नहीं है, अभेदस्वभाव ही आश्रय करने योग्य है – ऐसा वह जानता है।

भेद-अभ्यास द्वारा मुमुक्षुगण संसारपर्याय और मोक्षपर्याय दोनों के प्रति मध्यस्थ होते हैं।

आत्मा ज्ञाता शुद्धजीव हैं, तथा परपदार्थ अपने से पर हैं – ऐसा भेदाभ्यास करके अपने शुद्धस्वभाव में एकाग्र होना मोक्षगति का हेतु है। इसतरह जो मोक्षाभिलाषी जीव आत्मा के श्रद्धा-ज्ञान में लीन रहते हैं, वे भेदाभ्यास से मध्यस्थ रहते हैं। दृष्टि तो अखण्ड स्वभाव पर ही है, परन्तु स्वभाव में जितनी स्थिरता होती जाती है, उतना राग और भेद का आश्रय छूटता जाता है। मुझे राग टालना है और मोक्ष करना है – ऐसा विकल्प भी नहीं होता। राग टालने की दृष्टि भी पर्यायदृष्टि है। मोक्षपर्याय जो वर्तमान में है ही नहीं, उसपर भी लक्ष्य करे तो किसप्रकार करे? मोक्ष का कारण शुद्धस्वभाव तो तीनों काल उपस्थित है, उसके ऊपर ही ज्ञानियों की दृष्टि है और उसमें ही स्थिरता है।

इसप्रकार संसारपर्याय और मोक्षपर्याय के प्रति मध्यस्थ होने के कारण परमसंयमी मुनियों की वास्तविक वीतरागीदशा होती है। सहज स्थिरता बढ़ने पर भेद का भी लक्ष्य छूट जाता है। जब मुनियों को भेद का भी कर्तृत्व नहीं है तो फिर 'वस्त्र त्यागूँ अथवा शरीर की क्रिया करूँ' – ऐसा परद्रव्य के कर्त्तापने का अभिमान कैसे हो सकता है? वीतरागीदशा में शरीर की बाह्य नग्नदशा तो सहज ही होती है। **(क्रमशः)**

समयसार की 47 शक्तियों पर प्रवचन

समयसार कलश 262

आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी द्वारा समयसार की 47 शक्तियों पर किये गये प्रवचनों को यहाँ पाठकों के लाभार्थ क्रमशः प्रकाशित किया जा रहा है। शक्तियों की चर्चा करने के पहले यहाँ समयसार कलश 262 व 263 पर प्रवचन प्रस्तुत हैं।

(गतांक से आगे....)

अब कहते हैं कि इसलिए ज्ञानमात्र लक्षण से प्रसाध्यमान आत्मा में अविचलपने स्थापित दृष्टि द्वारा क्रमरूप अर्थात् समय-समय से प्रगट होती हुईं निर्मलपर्यायें और अक्रमरूप अर्थात् द्रव्य में अन्वयपने से विद्यमान अनन्तगुण एकसाथ समा जाते हैं, उस आत्मा में अविचल दृष्टि के स्थापित होने से क्रम व अक्रमरूप से प्रवर्तित होते हुए ज्ञान से अविनाभावी संबंध रखनेवाले अनन्त धर्म समूहमय आत्मा लक्षित हो जाता है। यह प्रमाण ज्ञान का विषय है।

ज्यों ही पर्याय में ऐसा सम्यक् ज्ञान प्रगट होता है, त्यों ही ज्ञान के साथ आत्मा में अभेदपने रहनेवाले तथा ज्ञान में प्रतिभासित होते हुए अनन्त गुणों की निर्मल पर्यायों को ग्रहण करता है, रागादि भेदव्यवहार आत्मा नहीं; क्योंकि राग-व्यवहार आत्मा नहीं है। उनका आत्मा में अभाव है। **शक्तियों के इस अधिकार में विकारी पर्यायों को आत्मा नहीं गिना।**

अहा हा.....! लक्षणभूत ज्ञान की पर्याय द्वारा जब प्रसाध्यमान आत्मा प्रसिद्ध हुआ, अनुभव में आया, तब ये क्रम से प्रवर्तमान पर्यायों और अक्रम से रहनेवाले गुणों सहित सम्पूर्ण आत्मा ज्ञान में प्रमेय होता है और यही प्रमाणज्ञान है।

सूक्ष्म बात है भाई! यह अन्तिम परिशिष्ट है, परिशिष्ट अर्थात् संक्षेप में बहुत कुछ कह देना। कहते हैं कि वस्तुपने लक्ष्य व लक्षण – ऐसे दो भेद नहीं हैं अर्थात् दो वस्तुएँ नहीं हैं। ज्ञान के साथ आत्मद्रव्य के एकपना है। अविनाभावीपना है अर्थात् जो ज्ञान है वही अनन्तधर्ममय आत्मवस्तु है, क्षेत्रभेद नहीं है, कालभेद भी नहीं है। मात्र समझाने के लिए भेद करके समझाया है।

भाई! **जबतक अकेले भेदों पर दृष्टि है, तबतक राग व विकल्प की ही उत्पत्ति होती है, आत्मा की अनुभूति नहीं होती। जब भेदों को गौण करके ज्ञान अभेद में ढलता है, तब आत्मा की प्रसिद्धि होती है। तब उस गौण किए या निषिद्ध किए भेद को व्यवहार से साधन कहा जाता है। बस, इसीकारण यहाँ आत्मा का ज्ञानमात्रपने व्यपदेश किया है।**

जिसप्रकार द्रव्य के अनन्त गुण परस्पर भिन्न हैं, उसी तरह गुणों की प्रत्येक समय की पर्यायें भी परस्पर भिन्न एवं स्वतंत्र हैं। यद्यपि अनन्त गुणों की पर्यायें एक साथ हैं; किन्तु उनमें से किसी एक गुण की पर्याय दूसरे गुण की पर्यायरूप नहीं है, उनमें परस्पर एकपना नहीं है।

तथा एक ही गुण की क्रम से प्रगट होती हुई पर्यायों में भी एक समय की पर्याय अपने पूर्ववर्ती समय की पर्यायरूप नहीं होती और उत्तरवर्ती समय की पर्यायरूप भी नहीं होती।

ओ हो! प्रत्येक गुण की समय-समयवर्ती-अनन्त समय की प्रत्येक पर्याय स्वतंत्र है। अहा! प्रभु आत्मा गुण-पर्याय रूप धर्मों का अभेद पिण्ड है। आत्मा में ज्ञानादि अनन्तगुण और अनन्त पर्यायें हैं। **यद्यपि एक गुण का रूप दूसरे गुण में है; परन्तु एक गुण दूसरे गुणरूप नहीं होता। एक गुण की पर्याय भी दूसरे गुण के कारण नहीं होती।** **(क्रमशः)**

ज्ञान गोष्ठी

सायंकालीन तत्त्वचर्चा के समय विभिन्न मुमुक्षुओं द्वारा
पूज्य स्वामीजी से पूछे गये प्रश्न और स्वामीजी द्वारा दिये गये उत्तर

प्रश्न : क्रमबद्ध के वास्तविक रहस्य को न समझनेवाला अज्ञानी क्रमबद्ध के गीत गाते रहने पर भी क्या भूल करता है ?

उत्तर : एक व्यक्ति कहता है कि पर्याय को क्रमबद्ध स्वीकार करने से नियतवाद हो जाता है और दूसरा व्यक्ति कहता है कि क्रमबद्ध में मुझे राग आनेवाला था, वह आ गया। वास्तविक रूप में ये दोनों ही जीव भूल में हैं, मिथ्यादृष्टि हैं। दोनों ने ही मिथ्यात्व को पुष्ट करके निगोद का मार्ग अपनाया है और जिसकी दृष्टि में क्रमबद्ध यथार्थ रीति से बैठ गई है, उसकी दृष्टि पर्याय से हटकर आनन्दमय आत्मा के ऊपर है, उसके क्रमबद्ध में राग आने पर भी वह मात्र ज्ञाता ही है।

ज्ञानानन्दस्वभाव की दृष्टिपूर्वक जो राग आता है, उस राग को भी जो दुःखरूप मानता है, उस जीव ने ही क्रमबद्ध को यथार्थ माना है। वह जीव उस आनन्द के साथ अपने रागरूप दुःख का मिलान करता है, तब उसे प्रतिभासित होता है कि अरे! यह राग दुःखरूप है। इसप्रकार क्रमबद्ध को माननेवाला आनन्द की दृष्टिपूर्वक राग को दुःखरूप जानता है, उसे राग की मिठास उड़ गई है। जिसे राग में मिठास पड़ी हुई है और पहले जो अज्ञान दशा में राग के टालने की चिंता थी, वह भी क्रमबद्ध का पाठ पढ़कर मिट गई है।

'राग मेरा नहीं'- ऐसा कहे और आनन्दस्वरूप की दृष्टि न हो, तो उसने मिथ्यात्व की ही वृद्धि की है। भाई ! यह तो कच्चे पारा जैसा वीतराग का सूक्ष्म रहस्य है। अन्तर में पचावे तो वीतरागता की पुष्टि हो और उसका रहस्य न समझे तो उलटा मिथ्यात्व ही पुष्ट हो।

प्रश्न : यह जीव, अजीव का तो कार्य नहीं कर सकता; किन्तु अपना परिणाम तो जैसा चाहे वैसा कर सकता है ?

उत्तर : जीव अपना परिणाम भी चाहे जैसा नहीं कर सकता; किन्तु जो परिणाम क्रमसर जैसा होना है, वैसा ही होगा; आगे-पीछे, जैसा-तैसा करना

चाहे तो भी नहीं होगा। जीव तो अकेला ज्ञायकभाव मात्र है। जाननहारा और केवल जाननहारा ही है।

प्रश्न : क्रमबद्ध का निर्णय कैसे हो, उसके द्वारा क्या सिद्ध करना है ? इसका तात्पर्य क्या है ?

उत्तर : क्रमबद्धपर्याय के सिद्धान्त का मूल तो अकर्त्तापना सिद्ध करना है। जैनदर्शन अकर्त्तावादी है। आत्मा परद्रव्य का तो कर्त्ता है ही नहीं, राग का भी कर्त्ता नहीं और पर्याय का भी कर्त्ता नहीं है। पर्याय अपने ही जन्मक्षण में अपने ही षट्कारक से स्वतन्त्ररूप से जो होनेयोग्य है, वही होती है; परन्तु इस क्रमबद्ध का निर्णय पर्याय के लक्ष्य से नहीं होता।

क्रमबद्ध का निर्णय करने जाये तो शुद्धचैतन्य ज्ञायकधातु के ऊपर दृष्टि जाती है और तभी जाननेवाली जो पर्याय प्रगट होती है, वह क्रमबद्धपर्याय को जानती है। क्रमबद्धपर्याय का निर्णय स्वभाव-सन्मुखता के अनन्त पुरुषार्थपूर्वक होता है। क्रमबद्धपर्याय का तात्पर्य वीतरागता है और वीतरागता पर्याय में तभी प्रकट होती है, जब वीतराग स्वभाव के ऊपर दृष्टि जाती है।

समयसार गाथा ३२० में कहा है कि ज्ञान बंध और मोक्ष का कर्त्ता नहीं है; किन्तु ज्ञाता ही है। आहाहा ! मोक्ष को ज्ञान जानता है। मोक्ष को करता है - ऐसा नहीं कहा। अपने में होनेवाली क्रमसर पर्याय को करता है - ऐसा नहीं; किन्तु मात्र जानता है - ऐसा कहा है। गजब बात है भाई !

प्रश्न : कारणशुद्धपर्याय की बहुत महिमा गाई जाती है; परन्तु हमारे लिये वह उपयोगी कैसे है?

उत्तर : वह वर्तमान में कारणरूप है, अत: जिसको वर्तमान कार्य (सम्यग्दर्शन से मोक्ष तक) प्रकट करना हो, उसको वह उपयोगी है; क्योंकि उस कारण का आश्रय लेने पर कार्य प्रकट होता है। वह कारणपर्याय द्रव्य से भिन्न नहीं है। द्रव्य त्रिकाल जैसे का तैसा ही पूरा का पूरा वर्तमान में वर्त रहा है। उस कारण को स्वीकार करके उसका आश्रय लेने पर निर्मल कार्य प्रकट हो जायेगा। द्रव्य-गुण का वर्तमान वर्तता स्व-आकार ही कारणशुद्धपर्याय है। अन्य कारणों का आश्रय छोड़कर इस स्व-आकार कारणशुद्धपर्याय के स्वीकार से ही शुद्धकार्य होता है।

समाचार दर्शन -

गोम्मटेश्वर भगवान श्री बाहुबली स्वामी महामस्तकाभिषेक महोत्सव-2018 के अवसर पर -

राष्ट्रीय जैन विद्वत्सम्मेलन संपन्न

श्रवणबेलगोला (कर्नाटक) : यहाँ गोम्मटेश्वर भगवान श्री बाहुबली स्वामी महामस्तकाभिषेक महोत्सव समिति-2018 के तत्त्वावधान में एवं कर्मयोगी स्वस्तिश्री चारुकीर्ति भट्टारक महास्वामी के नेतृत्व में राष्ट्रीय जैन विद्वत्सम्मेलन दिनांक 1 से 5 अक्टूबर तक सानन्द संपन्न हुआ।

विद्वत्सम्मेलन के संपूर्ण कार्यक्रम श्री अशोकजी बड़जात्या की अध्यक्षता में संपन्न हुये। मुख्य संयोजक श्री नवीनजी जैन गाजियाबाद एवं संयोजक श्री सुरेन्द्रजी जैन बाकलीवाल थे। अ.भा. शास्त्री परिषद् के राष्ट्रीय अध्यक्ष डॉ. श्रेयांसकुमारजी जैन बड़ौत की सर्वाध्यक्षता में आयोजित इस विद्वत्सम्मेलन में दिगम्बर जैन समाज की विविध विचारधाराओं व मान्यताओं के अर्धशताधिक विद्वत्गण सम्मिलित हुये।

रात्रि में सांस्कृतिक कार्यक्रमों का भी आयोजन हुआ। उद्घाटन सत्र में **पूर्व प्रधानमंत्री माननीय एच.डी. देवेगौड़ा** सहित अनेक महानुभाव उपस्थित थे।

विद्वत्समागम - इस अवसर पर अ.भा.दिगम्बर जैन विद्वत्परिषद के राष्ट्रीय अध्यक्ष तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमंचदजी भारिल्ल के अतिरिक्त टोडरमल स्नातक परिषद के अध्यक्ष पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली, ब्र.जतीशचंदजी शास्त्री दिल्ली, पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील जयपुर, डॉ. वीरसागरजी जैन दिल्ली, डॉ. सुदीपजी जैन दिल्ली, डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर, डॉ.अनेकान्तजी जैन दिल्ली, पण्डित पीयूषजी शास्त्री जयपुर, श्री परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल जयपुर, पण्डित विपिनजी शास्त्री मुम्बई, डॉ. शीतलचंदजी जैन जयपुर, डॉ. जयकुमारजी जैन मुजफ्फरनगर, डॉ. नलिन के. शास्त्री बोधगया, ब्र.जयकुमारजी जैन 'निशांत' टीकमगढ, डॉ. अनुपमजी जैन इन्दौर, डॉ. प्रेमसुमनजी जैन उदयपुर, डॉ. कमलेशजी जैन वाराणसी, डॉ. राजेन्द्रजी बंसल अमलाई, श्री अखिलजी बंसल जयपुर, प्रो. अरुणजी जैन सांगानेर, डॉ. ऋषभजी जैन फौजदार वैशाली, पण्डित शिवचरण लाल जैन मैनपुरी, डॉ. फूलचंद जैन प्रेमी वाराणसी, डॉ. नीलमजी जैन पुणे, डॉ. नरेन्द्रजी जैन गाजियाबाद, ब्र. प्रदीप पीयूष जबलपुर आदि विद्वत्गण उपस्थित थे।

इस अवसर पर देश के विभिन्न विद्वत्परिषद् के सदस्यों के साथ पण्डित टोडरमल स्नातक परिषद् के 50 शास्त्री विद्वानों को विशेषरूप से आमंत्रित किया गया था।

विभिन्न विद्वत् संस्थाओं का समागम - सम्मेलन के अन्तर्गत 29 सत्रों में 157 विद्वानों के आलेख वाचन और चर्चा हुई। इस सम्मेलन में अ.भा.दिगम्बर जैन शास्त्री परिषद्, विद्वत्परिषद्, विद्वत् शास्त्री परिषद् संस्थान, टोडरमल स्नातक परिषद्, तीर्थंकर ऋषभदेव विद्वत्

महासंघ, प्रभावना जनकल्याण परिषद्, कर्नाटक दिग.जैन शास्त्री परिषद् सहित देशभर की विद्वत् संस्थाओं के कुल 578 विद्वान एवं उनके परिजन सहित 1600 साधर्मीजन उपस्थित थे।

अभूतपूर्व जिनेन्द्र शोभायात्रा – दिनांक 1 अक्टूबर को जिनेन्द्र अभिषेक के पश्चात् शोभायात्रा निकाली गई, जिसमें सभी विद्वत्गण जिनेन्द्र भगवान का गुणानुवाद करते हुए नृत्य-गान कर रहे थे। सभी विद्वत्गणों को मालवी पगड़ी, टोडरमल अंगरखा और सुनहरी बॉर्डर की धोती प्रदानकर सम्मानित किया गया।

दुर्लभ ग्रंथों की प्रदर्शनी – सम्मेलन में प्राचीन आचार्यों व सैंकड़ों विद्वानों के जीवन वृत्तांतों की पोस्टर प्रदर्शनी, इन्दौर के विविध मंदिरों एवं श्री तेरापंथी बड़ा मंदिर जौहरी बाजार जयपुर से प्राप्त कुल 185 दुर्लभ ग्रंथों की मूल पाण्डुलिपियों की प्रदर्शनी तथा सैंकड़ों नवीन ग्रंथों की प्रदर्शनी भी लगाई गई।

स्नातक परिषद का सम्मेलन – दिनांक 2 अक्टूबर को टोडरमल स्नातक परिषद का अनौपचारिक सम्मेलन डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल के मार्गदर्शन में एवं दिनांक 4 अक्टूबर को स्वस्ति श्री भट्टारक चारुकीर्तिजी, सर्वाध्यक्ष डॉ. श्रेयांसकुमारजी बड़ौत, संयोजन समिति के अध्यक्ष श्री अशोकजी बड़जात्या व देश के अन्य विशिष्ट विद्वानों के साथ स्नातक परिषद के सदस्यों का विशेष संवाद भी संपन्न हुआ।

समापन समारोह में कर्नाटक के मंत्री ए. मंजू सहित सभी विद्वत्गण उपस्थित थे।

विद्वानों को भेंट – दि.जैन महासमिति के राष्ट्रीय कार्याध्यक्ष श्रेष्ठी श्री नवीनजी जैन गाजियाबाद द्वारा प्रत्येक आमंत्रित विद्वान को एक मोबाईल टैबलेट, जिसमें 50 आगम ग्रंथों का संकलन है, भेंट किया गया। नवीनजी के इस कार्य की सभी विद्वानों ने प्रशंसा की।

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट द्वारा भी 13 पुस्तकों का सेट सभी विद्वानों को भेंट किया गया।

राष्ट्रीय जैन विद्वत्सम्मेलन को विश्वस्तरीय बनाने का प्रयास महासमिति द्वारा किया गया। सम्मेलन की श्रेष्ठ व्यवस्था हेतु दिगम्बर जैन महासमिति के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री अशोकजी बड़जात्या, श्री सुरेन्द्रजी बाकलीवाल, श्री डी.के. जैन, श्री प्रवीणजी पाटनी, श्री जैनेशजी झांझरी, श्री अनिलजी जैनको, श्री वीरेन्द्रजी बड़जात्या, श्री महावीरजी बैनाड़ा, श्री मनोजजी पाटोदी, श्री दीपकजी पाटनी, श्री जैनेन्द्रजी सेठी, श्री विपिनजी गंगवाल, श्री परागजी जैन, श्री प्रतिषजी जैन, संगीता पारस विनायका सहित सभी 71 युगल सदस्यों को सम्मानित किया गया। •

धन्यवाद !

उदयपुर (राज.) निवासी **श्री तपिशजी शास्त्री एवं श्रीमती चेतना जैन** की प्रथम वैवाहिक वर्षगांठ के उपलक्ष्य में संस्था को 2500/- रुपये प्राप्त हुये।

शिविर का समापन एवं पुरस्कार वितरण

जयपुर (राज.) : यहाँ टोडरमल स्मारक भवन में शिक्षण शिविर का समापन एवं पुरस्कार वितरण समारोह डॉ. भारिल्ल की अध्यक्षता में दिनांक 24 सितम्बर को संपन्न हुआ।

कार्यक्रम में श्री महेन्द्रकुमारजी गंगवाल जयपुर, श्री दिलीपभाई शाह मुम्बई तथा समस्त विद्वत्गण व अध्यापकगण उपस्थित थे। इसमें तीनों महाविद्यालय के अनेक विद्यार्थियों ने अपने अनुभव सुनाते हुए कहा कि एक साथ अनेक विषयों का कम से कम समय में व्यवस्थित ज्ञान प्राप्तकर हम सभी को बहुत लाभ मिला है; अत: ऐसे शिविर प्रतिवर्ष अवश्य आयोजित होने चाहिये। अध्यापकों की ओर से डॉ. संजीवजी गोधा एवं डॉ. प्रवीणजी शास्त्री ने अपने विचार व्यक्त किये। पण्डित पीयूषजी शास्त्री ने शिविर-रिपोर्ट प्रस्तुत करते हुये शिविर में सहयोग करने वाले सभी महानुभावों का धन्यवाद ज्ञापित किया। सभी विद्वानों एवं अध्यापकों का आभार श्री परमात्मप्रकाशजी ने किया। अन्त में डॉ. भारिल्ल द्वारा दीक्षान्त भाषण के रूप में सभी छात्रों को मार्मिक उद्बोधन प्राप्त हुआ। तत्पश्चात् सफल विद्यार्थियों को साहित्य एवं प्रमाण-पत्र देकर पुरस्कृत किया गया। विशेष स्थान प्राप्त करने वाले छात्र इसप्रकार हैं –

उपाध्याय कनिष्ठ/वरिष्ठ में 69 छात्र प्रथम श्रेणी, 46 छात्र द्वितीय श्रेणी एवं 19 छात्र तृतीय श्रेणी; प्रथम वर्ष में 40 छात्र प्रथम श्रेणी, 21 छात्र द्वितीय श्रेणी एवं 4 छात्र तृतीय श्रेणी तथा शास्त्री द्वितीय/तृतीय वर्ष में 48 छात्र प्रथम श्रेणी, 18 छात्र द्वितीय श्रेणी एवं 3 छात्र तृतीय श्रेणी से उत्तीर्ण हुये। उपाध्याय कनिष्ठ/वरिष्ठ में संयम जैन दिल्ली ने प्रथम, अंकुर जैन खड़ैरी ने द्वितीय एवं आप्त अनुशीलन जैन दमोह ने तृतीय स्थान प्राप्त किया।शास्त्री प्रथम वर्ष में दुर्लभ जैन गुढाचन्द्रजी ने प्रथम, निखिल जैन फिरोजाबाद ने द्वितीय एवं मयंक जैन बण्डा ने तृतीय स्थान प्राप्त किया। शास्त्री द्वितीय/तृतीय वर्ष में संयम जैन नागपुर ने प्रथम, प्रतीक जैन विदिशा ने द्वितीय एवं अमन जैन दिल्ली ने तृतीय स्थान प्राप्त किया। इसके अतिरिक्त तीनों महाविद्यालयों की सभी कक्षाओं में प्रथम स्थान प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों को भी सम्मानित किया गया। कार्यक्रम का मंगलाचरण आकाश जैन कोटा एवं संचालन पण्डित जिनकुमारजी शास्त्री ने किया।

डॉ. पाटीलजी का सम्मान

अपने जीवन को तत्त्वज्ञान के लिये समर्पित करने वाले और वर्षों से अध्यात्मरस गर्भित समयसार ग्रंथ का अध्यापन कराने वाले आत्मख्याति के विशेषज्ञ **पण्डित शांतिकुमारजी पाटील** का सम्मान आध्यात्मिक शिक्षण शिविर के अन्तिम दिन दिनांक 24 सितम्बर को महाविद्यालय के शास्त्री तृतीय वर्ष के छात्रों ने किया।

मंचासीन अतिथियों में डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल, पण्डित अभयजी शास्त्री देवलाली ने अपना उद्बोधन दिया। इस अवसर पर डॉ.संजीवकुमारजी गोधा ने प्रशस्ति वाचन एवं शुभांशु जैन ने काव्यपाठ किया। संचालन आकाश जैन ने किया। **– जिनकुमार शास्त्री**

साप्ताहिक गोष्ठियाँ संपन्न

जयपुर (राज.) : यहाँ टोडरमल स्मारक भवन में दिनांक 1 अक्टूबर को महाविद्यालय के छात्रों द्वारा 'तीन लोक' विषय पर गोष्ठी संपन्न हुई। गोष्ठी की अध्यक्षता पण्डित अरुणजी शास्त्री बण्ड ने की। श्रेष्ठ वक्ताओं में संयम जैन खनियांधाना (उपाध्याय कनिष्ठ) और वैभव जैन आरोन (उपाध्याय वरिष्ठ) रहे। संचालन समकित जैन व मधुर जैन (शास्त्री तृतीय वर्ष) ने किया। निर्णायक व आभार प्रदर्शक के रूप में जिनकुमारजी शास्त्री उपस्थित थे।

दिनांक 8 अक्टूबर को 'सम्यग्दर्शन' विषय पर गोष्ठी आयोजित की गई, जिसकी अध्यक्षता पण्डित अरुणजी शास्त्री बण्ड ने की। श्रेष्ठ वक्ता के रूप में सम्यक् सिंघई खनियांधाना (शास्त्री प्रथम वर्ष) एवं वैभव जैन ग्वालियर (शास्त्री प्रथम वर्ष) रहे। निर्णायक के रूप में पण्डित जिनकुमारजी शास्त्री उपस्थित थे। गोष्ठी का संचालन वीकेश जैन व अंकुश जैन (शास्त्री तृतीय वर्ष) ने एवं आभार प्रदर्शन संयम जैन नागपुर ने किया।

ज्ञानार्णव कन्नड भाषा में प्रकाशित

श्रवणबेलगोला (कर्नाटक) : यहाँ आयोजित राष्ट्रीय जैन विद्वत्सम्मेलन के अवसर पर दिनांक 2 अक्टूबर को श्री कानजीस्वामी अतिथि गृह में स्नातक परिषद् सम्मेलन के अवसर पर श्री शुभचन्द्राचार्य विरचित ज्ञानार्णव अपर नाम योगप्रदीपाधिकार के कन्नड अनुवाद का विमोचन तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल द्वारा किया गया।

इस अवसर पर पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली, ब्र. हेमचंदजी 'हेम' देवलाली, पण्डित शांतिकुमारजी पाटील जयपुर, डॉ. सुदीपजी शास्त्री दिल्ली, श्री परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल, डॉ. वीरसागरजी शास्त्री दिल्ली, डॉ. राकेशकुमारजी शास्त्री नागपुर, डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर, पण्डित महावीरजी पाटील सांगली, पण्डित विपिनजी शास्त्री मुम्बई आदि 55 विद्वत्गण उपस्थित थे। इस ग्रंथ का अनुवाद **श्री बाहुबली भोसगे** एवं प्रकाशन श्री महादेव कुरकुरे (दिगम्बर जैन स्याद्वाद ग्रंथमाला, धारवाड) ने किया।

संगोष्ठी संपन्न

जयपुर (राज.) : यहाँ भट्टारकजी की नसियां के शांतादेवी ताराचंद बड़जात्या कॉन्फ्रेन्स हॉल में श्री दिगम्बर जैन मंदिर महासंघ जयपुर के तत्त्वावधान में दिनांक 15 अक्टूबर को एक संगोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसका विषय था **'निर्माल्य द्रव्य की अवधारणा'**। गोष्ठी के अध्यक्ष श्री महेन्द्रजी पाटनी एवं मुख्य अतिथि श्री सुधांशुजी कासलीवाल थे।

इस अवसर पर डॉ. वीरसागरजी जैन, डॉ. संजीवकुमारजी गोधा, डॉ. कमलचंदजी सौगानी एवं डॉ. प्रेमचंदजी रांवका ने अपना वक्तव्य प्रस्तुत किया। इसके अतिरिक्त श्री एन.के.सेठी एवं श्री पूनमजी शाह ने भी अपने विचार रखे।

अंत में मुख्य अतिथि श्री सुधांशुजी कासलीवाल के उद्बोधन के पश्चात् मंदिर महासंघ के महामंत्री श्री राजकुमारजी कोठारी व संयोजक विपिनकुमारजी बज ने आभार व्यक्त किया। संगोष्ठी का संचालन श्री योगेशजी टोडरका ने किया।

नवम् प्रांतीय अधिवेशन संपन्न

जयपुर (राज.) : यहाँ टोडरमल स्मारक भवन में शिक्षण शिविर के अवसर पर दिनांक 24 सितम्बर को अ.भा.जैन युवा फैडरेशन राजस्थान का नवम् प्रांतीय अधिवेशन संपन्न हुआ, जिसका विषय था 'युवा फैडरेशन की गतिविधियों में स्नातकों की प्रासंगिकता'।

कार्यक्रम की अध्यक्षता डॉ. जिनेन्द्रजी शास्त्री उदयपुर ने की। मुख्य अतिथि के रूप में श्री विपुल के. मोटानी मुम्बई (राष्ट्रीय अध्यक्ष) एवं विशिष्ट अतिथि के रूप में श्री परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल जयपुर (राष्ट्रीय महामंत्री), श्री शुद्धात्मप्रकाशजी भारिल्ल जयपुर (राष्ट्रीय मंत्री), श्री संजयजी सेठी जयपुर, डॉ. भागचंदजी शास्त्री जयपुर आदि महानुभाव उपस्थित थे।

इस अवसर पर जिनेन्द्रजी शास्त्री के स्वागत भाषण के उपरान्त परमात्मप्रकाशजी एवं शुद्धात्मप्रकाशजी ने भी अपने विचार व्यक्त किये।

सभा को संबोधित करते हुए फैडरेशन के राष्ट्रीय महामंत्री श्री परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल ने घोषणा की कि पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट की ही भांति अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन भी 'आत्मानुभूति और तत्त्वप्रचार' के अपने लक्ष्य के साथ जैनदर्शन के गहन अध्ययन-अध्यापन और प्रचार के कार्य में जुटा हुआ है और शीघ्र ही इस हेतु अनेक नई और प्रभावशाली योजनाएं प्रारम्भ की जायेंगी।

कार्यक्रम का मंगलाचरण श्री दिव्यांश जैन, संचालन पण्डित राजेशजी शास्त्री शाहगढ एवं आभार प्रदर्शन डॉ.संजीवकुमारजी गोधा जयपुर ने किया।

जयधवल (कषाय पाहुड) ताम्रपत्र पर उत्कीर्ण

आचार्य धरसेन द्वारा उपदिष्ट तथा आचार्य भूतबली द्वारा विरचित जयधवल (कषाय पाहुड) को ताम्रपत्र पर उत्कीर्ण करने का कार्य पूर्ण हुआ एवं इसका विमोचन दिनांक 22 सितम्बर को जयपुर में आध्यात्मिक शिक्षण शिविर के अवसर पर डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल के करकमलों द्वारा किया गया। डॉ.भारिल्ल ने ताम्रपत्र की उपयोगिता एवं महत्व पर प्रकाश डाला। ज्ञातव्य है कि अब धवला की 13 व महाधवल की 8 पुस्तकों का कार्य प्रगति पर है।

संपर्क सूत्र – पण्डित मनोज कुमार जैन (चीनीवाले), मोबाइल +91-7599301008
E-mail : ptmanojjain@gmail.com

डॉ. भारिल्ल के आगामी कार्यक्रम

14 से 19 नव. 2017	झालरापाटन	पंचकल्याणक
24 से 28 नव. 2017	नागपुर	पंचकल्याणक
2 से 7 दिसम्बर 2017	शाश्वतधाम-उदयपुर	पंचकल्याणक
10 से 12 जन. 2018	मंगला.विश्व.-अलीगढ	सेमिनार
12 से 16 फर.-2018	ललितपुर	पंचकल्याणक

खुशखबरी ! भव्य शुभारम्भ!!

श्री कुन्दकुन्द कहान दि.जैन मुमुक्षु आश्रम ट्रस्ट गिरधरपुरा कोटा परिसर में
प्रेमचंद जैन बजाज चेरिटेबल ट्रस्ट द्वारा संचालित

आचार्य समन्तभद्र विद्यानिकेतन

आचार्य समन्तभद्र

भव्य शुभारम्भ

(सोमवार, 2 अप्रैल 2018)

मुमुक्षु आश्रम, कोटा

आप सभी को सूचित करते हुए अत्यंत हर्ष है कि श्री कुन्दकुन्द कहान दि.जैन मुमुक्षु आश्रम ट्रस्ट, कोटा विगत 11 वर्षों से तत्त्वज्ञान के प्रचार–प्रसार में संलग्न है और 2008 से शास्त्री अध्ययन हेतु आचार्य धरसेन महाविद्यालय का संचालन कर रहा है, मुमुक्षु आश्रम ट्रस्ट द्वारा ही लौकिक के साथ धार्मिक शिक्षण हेतु **आचार्य समन्तभद्र विद्यानिकेतन** का मंगल आरम्भ दिनांक 2 अप्रैल 2018 से हो रहा है, जिसमें 8वीं कक्षा से प्रवेश दिया जायेगा।

विद्यानिकेतन की मुख्य विशेषताएं

- अंग्रेजी माध्यम द्वारा सी.बी.एस.सी. के उच्च स्तरीय स्कूल में अध्ययन।
- लौकिक शिक्षण के साथ धार्मिक अध्ययन व चारित्रिक निर्माण का सुनहरा अवसर।
- **7वीं कक्षा में 90% से अधिक अंक सहित प्रवेश लेने वाले छात्रों को स्कूल फीस में 50% की छात्रवृत्ति।**
- **80% अंक से 10वीं उत्तीर्ण करने पर एवं शास्त्री महाविद्यालय में प्रवेश लेने वाले छात्रों को 8वीं, 9वीं एवं 10वीं – तीनों वर्षों की पूरी स्कूल फीस वापस।**
- सर्वसुविधायुक्त (लैट–बाथ अटैच) नवीन आवासीय परिसर।
- आवास, भोजन व बस आदि की उच्चस्तरीय सम्पूर्ण नि:शुल्क व्यवस्था।
- प्रतिवर्ष 24 छात्रों को प्रवेश।

नोट :– प्रवेश फार्म 15 नवम्बर से उपलब्ध होंगे। प्रवेश प्रक्रिया मार्च में संपन्न की जायेगी।

श्री प्रेमचंद बजाज (अध्यक्ष) पण्डित रतन चौधरी (निदेशक) 8104597337

संपर्क सूत्र :– पण्डित धर्मेन्द्र शास्त्री (प्राचार्य) 9785643203,
पण्डित सौरभ शास्त्री (अधीक्षक) 7891563353, पण्डित अभिनय शास्त्री (सह–अधीक्षक) 7737979912

प्रवेश फार्म मंगाने हेतु संपर्क
बजाज पैलेस, पालीवाल कम्पाउण्ड, नगर परिषद कॉलोनी, छावनी, कोटा 324007 (राज.)

तीर्थधाम ढाईद्वीप जिनायतन

(रीति–नीति)

परम् पूज्य शासन नायक, देवाधिदेव भगवान महावीर द्वारा कथित एवं परम् वीतरागी कुन्दकुन्दाचार्यादि दिगम्बर संतों एवं पाण्डे राजमलजी, पंडित बनारसीदासजी, पंडित टोडरमलजी, पं. जयचंदजी छाबड़ा, कविवर दौलतरामजी आदि विद्वानों द्वारा लिखित तथा आध्यात्मिक सत्पुरूष पूज्य गुरूदेव श्री कानजीस्वामी द्वारा उद्घाटित तत्वज्ञान के प्रचार-प्रसार के पुनीत उद्देश्य से श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन शासन प्रभावना ट्रस्ट (रजिस्टर्ड) इन्दौर एवं श्री कुन्दकुन्द कहान सर्वोदय ट्रस्ट (रजिस्टर्ड) इन्दौर द्वारा मध्यप्रदेश के प्रमुख औद्योगिक नगर, इन्दौर में गोम्मटगिरि सर्कल पर स्थित नैनोद ग्राम में प्रस्तावित कुन्दकुन्द नगर में **तीर्थधाम ढाईद्वीप जिनायतन** का निर्माण संपूर्ण भारत के मुमुक्षु समाज के सहयोग से किया जा रहा है।

इस **जिनायतन** में स्थापित सभी जिनबिम्बों का प्रक्षाल एवं पूजन विधान आदि सभी धार्मिक अनुष्ठान दिगम्बर जैन कुन्दकुन्द आम्नाय, शुद्ध तेरह पंथ के अनुसार सम्पन्न किये जायेंगे।

इस जिनायतन में भेदविज्ञान एवं वीतरागता पोषक समस्त दिगम्बर जैन शास्त्रों का पठन-पाठन तथा प्रचार-प्रसार किया जायेगा।

यहां जिन प्रतिमा पर केसर लगाना, फूल चढ़ाना, दीप प्रज्जवलन-दीपक से आरती आदि कार्य, महिलाओं द्वारा जिनबिम्ब स्पर्श और प्रक्षाल, पंचामृत अभिषेक एवं पंच परमेष्ठी के अतिरिक्त अन्य सरागी देवी-देवताओं की स्थापना सर्वथा निषिद्ध रहेगी।

शिलान्यास तिथि : कार्तिक सुदी पंचमी संवत् 2065, रविवार 02 नवम्बर 2008

✻ निर्माता ✻

श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन शासन प्रभावना ट्रस्ट (रजि.)

एवं

श्री कुन्दकुन्द कहान सर्वोदय ट्रस्ट (रजि.) इन्दौर (म.प्र.)

R.N.I. No. 38278/83 *Postal Regd. No. JaipurCity/421/2015-17*

ढ़ाईद्वीप में विराजमान होने वाली प्रतिमाएं 1138
अन्य प्रतिमा 5 कुल प्रतिमा 1143

• तीस चौबीसी में विराजमान होने वाली कुल प्रतिमा *(690 प्रतिमा सफेद मार्बल की 18 इंच की और 30 सफेद मार्बल की 33 इंच की प्रतिमा)*	= 720
• पंचमेरू में विराजमान होने वाली कुल प्रतिमा *(9 इंच की रत्नों की प्रतिमा)*	= 80
• गजदंत पर्वतों में विराजमान होने वाली कुल प्रतिमा *(9 इंच की रत्नों की प्रतिमा)*	= 20
• मानुशोत्तर पर्वतों पर अकृतिम जिन चैत्यालयों में विराजमान होने वाली कुल प्रतिमा *(15 इंच स्फटिकमणि की प्रतिमा)*	= 04
• विदेह क्षेत्र में विराजमान होने वाली प्रतिमाजी *(33 इंच ग्रेनाईट की प्रतिमा)*	= 20
• शेष अकृतिम जिन चैत्यालयों में विराजमान होने वाली प्रतिमाजी *(7 इंच की रत्नों की प्रतिमा)*	= 294
योग	= 1138

इस प्रकार ढ़ाईद्वीप में विराजमान होने वाली 1138 जिन प्रतिमाएं तथा अन्य शेष (5) विराजमान होने वाली जिन प्रतिमाएं।

शेष विराजमान होने वाली प्रतिमाओं का विवरण –

• 111 इंच की खड्गासन प्रतिमा भरत एवं बाहुवली जी	= 2
• 33 इंच की पंचधातु की 1 प्रतिमा (स्वाध्याय हाल में विराजमान होने वाली)	= 1
• 33 इंच की सफेद धातु की प्रतिमा (स्वाध्याय हाल में विराजमान होने वाली)	= 1
• 33 इंच की विश्व की सबसे बड़ी स्फटिकमणि की प्रतिमा	= 1
योग	= 1143

और आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी की सभी 1143 प्रतिष्ठेय प्रतिमाएं ढ़ाईद्वीप जिनायतन में आ चुकी है।

श्री कुन्द–कुन्द कहान दिगम्बर जैन शासन प्रभावना ट्रस्ट, इंदौर
गोम्मटगिरी सर्किल, हातोद रोड़, नैनोद, इंदौर (म.प्र.) नं. – 98933.00691

सम्पादक :
डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल
शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., पीएच. डी
सह–सम्पादक :
डॉ. संजीवकुमार गोधा
एम.ए.द्वय , नेट, एम. फिल (जैनदर्शन), पीएच.डी
प्रकाशक एवं मुद्रक :
ब्र. यशपाल जैन, एम. ए.
द्वारा पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के लिये जयपुर प्रिंटर्स प्रा.लि., जयपुर से मुद्रित एवं प्रकाशित।

If undelivered please return to -- **Pandit Todarmal Smarak Trust , A-4, Bapu Nagar, Jaipur - 302015**